संस्कृति और नैतिकता का बदलता स्वरूप

Dr. Pramod Kumar Sharma, Assistant Professor, Arya Mahila TT College, Alwar, Rajasthan

संस्कृति में व्यक्ति तथा समाज की वे क्रियाएं, उत्पादन व्यवहार, संस्कार तथा परिष्कार सम्मिलित है जिनके द्वारा व्यक्ति तथा समाज के लक्षणों को पहचाना एवं परखा जा सकता है। इस आधार पर कहा जा सकता है की संस्कृति मानव के आदिकाल से लेकर आज तक कि वह संचित निधि है जो उत्पादन और परिष्कार द्वारा निरन्तर प्रगति करती हुई एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को उत्तराधिकार स्वरूप प्राप्त होती चली आई है तथा भविष्य में भी उसकी यही गति रहेगी। संस्कृति का संबंध सुसंस्कारों से होता है अर्थात अच्छे संस्कारों के परिणाम और भाव को ही हम संस्कृति कहते हैं।

जब हम भारत के चिरंतन इतिहास पर व्यापक दृष्टि डालते हैं तो हम देखते हैं कि मूल्य और रीतिरिवाजों ने संस्कृति को प्रोत्साहित करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है। पिछले 50 वर्षों में भारत सरकार सांस्कृतिक प्रगति को सुगम बनाने की विविध नीतियां बनाती रही है। इस संबंध में सरकार ने हमेशा उस उसूल को माना है कि राज्य का काम संस्कृति को निर्देशित करने का नहीं है बल्कि उसे तो केवल सर्जनशील व्यक्तियों के बीच संवाद और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को बढ़ावा देने लायक माहौल बनाने का काम करना है।

मेरा मानना है कि नैतिक गुण होने पर ही हम किसी संस्कृति को ढंग से विकसित और स्थापित मान सकते हैं। मेरा मानना है की सांस्कृतिक गतिविधियों से मानव अस्तित्व स्वयं को सोद्देश्य और सार्थक बनाता है ।संस्कृति और उसकी नैतिकता को बनाये रखने के लिए आज समाज को उस पर ध्यान देने की आवश्यकता है। पश्चिमी संस्कृति के बढ़ते प्रभाव के कारण आज हम भारतीय संस्कृति के मूल तत्वों से विमुख होकर पश्चात संस्कृति की चका–चोंध को देखकर अपनी नैतिकता के विशेष गुणों से विमुख होते जा रहे हैं। बढ़ती आर्टिफिशियल इंटेलिजेंसि के कारण हम हमारी संस्कृति को देहाती के रूप में देखने लगे हैं। अपने आपको आधुनिकता की दौड़ में अग्रसर दिखाने के लिए हम संस्कृत में नित्य नए प्रयोग करते जा रहे हैं। हम हमारे संस्कारों से विमुख होकर पाश्चात्य देशों की संस्कृति के अनुरूप अपने व्यवहार में उनके संस्कारों को अपनाते जा रहे हैं।